महमूद एवं अन्य

बनाम

यू.पी. राज्य

15 नवम्बर, 2007

[अलतमस कबीर एवं बी. सुदर्शन रेड्डी, जे जे.]

दंड संहिता, 1860 धारा 302 सपठित धारा 149 और धारा 147, 148 और 379 पीडब्लू 1 के पिता पर आग्नेयास्त्रों और लाठियों से जानलेवा हमला-पांच आरोपियों पर अभियोजन का मामला पूरी तरह से पीडब्लू 1,2 और 3 के प्रत्यक्ष साक्ष्य पर आधारित-पीडब्लू 1 ने अपनी एफआईआर में घटना का विवरण बताया-निचली अदालतों द्वारा सभी आरोपीयों को दोषी ठहराया गया- दो दोषियों की अपील पर, अभिनिर्धारितः घटनाओं का क्रम स्पष्ट रूप से इंगित करता है कि एफआईआर पूर्व-समय और पूर्व-दिनांकित नहीं थी जैसा कि बचाव पक्ष ने आरोप लगाया था- पीडब्लू-1 के आचरण के बारे में कुछ भी अप्राकृतिक नहीं है- उसने हमले के मामले और प्रत्येक आरोपी द्वारा निभाई गई भूमिका तरीके के बारे में विस्तृत विवरण दिया- पीडब्लू-2 और पीडब्लू-3 स्वतंत्र गवाह थे और उनकी गवाही पूरी तरह से पीडब्लू-1 की गवाही से पुष्ट हुई थी- अपराध स्थल पर पीडब्लू-1 की उपस्थिति को केवल इसलिए संदिग्ध नहीं माना जा सकता क्योंकि उसने अपने पिता को और अधिक हमले से बचाने का प्रयास नहीं किया था-

पीडब्लू-1 ने अपनी जान जोखिम में डालने की हिम्मत नहीं जुटाई होगी- ऐसी स्थितियों में व्यक्ति-दर-व्यक्ति प्रतिक्रिया भिन्न हो सकती है- गैरकानूनी सभा का सामान्य उद्देश्य इस तथ्य से स्पष्ट है कि उनमें से कुछ घातक हथियारों के साथ सशस्त्र थे- उनमें से कोई भी जिज्ञासु दर्शक या दर्शक नहीं था- दोषसिद्धि बरकरार रखी गई।

दंड प्रक्रिया संहिता,1973-धारा 157-एसएचओ द्वारा स्थानीय मजिस्ट्रेट को विशेष रिपोर्ट भेजना-आयोजित समय सीमा अभिनिर्धारितः किस समय के भीतर विशेष रिपोर्ट भेजनी आवश्यक है इसका कोई सार्वभौमिक नियम नहीं है-- प्रत्येक मामला अपने स्वयं के तथ्यों पर आधारित होता है- एफआईआर भेजने में देरी अपने आप में ऐसी परिस्थिति नहीं है जो अभियोजन के मामले को पूरी तरह से खारिज कर सकती हो, विशेषकर जब इस तरह की देरी के लिए ठोस और उचित स्पष्टीकरण प्रदान किया गया हो।

साक्ष्य- चिकित्सीय राय बनाम चक्षुदर्शी साक्ष्य -अभिनिर्धारितः यदि अन्यथा स्वीकार्य हो तो चक्षुदर्शी साक्ष्य को चिकित्सकीय राय से अधिक महत्व दिया जाना चाहिए।

अभियोजन पक्ष के अनुसार, दो अपीलकर्ताओं सहित पांच लोगों ने पीडब्ल्यू 1 के पिता पर बंदूकों और लाठियों से हमला किया, जब वह मोटरसाइकिल पर अपने गांव लौट रहा था, जिसके परिणामस्वरूप उसकी

मृत्यु हो गई। विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय दोनों ने अपीलकर्ताओं सहित सभी आरोपी व्यक्तियों को दोषी ठहराया। अपीलकर्ता नंबर 1 को धारा 302 सपठित धारा 149 और धारा 148 आईपीसी के तहत दोषी ठहराया गया था, जबकि अपीलकर्ता नंबर 2 को धारा 302 सपठित धारा 149 आईपीसी और धारा 147 और 379 आईपीसी के तहत दोषी ठहराया गया था।

इस न्यायालय में अपील में, अपीलकर्ताओं की सजा को मुख्य रूप से इस आधार पर चुनौती दी गई थी कि पीडब्लू-1 द्वारा दर्ज करवाई गई एफआईआर पूर्व समय और पूर्व-दिनांकित थी और पुलिस के साथ उचित विचार-विमर्श और विचार-विमर्श के बाद अस्तित्व में लाई गई थी।

न्यायालय ने अपील खारिज करते हुए अभिनिर्धारित किया गया:

1.1. एक आपराधिक मामले में और विशेष रूप से हत्या के मामले में एफआईआर मुकदमे में अभियोजन पक्ष के नेतृत्व में साक्ष्य की सराहना करने के उद्देश्य से साक्ष्य का एक महत्वपूर्ण और मूल्यवान टुकड़ा है। एफआईआर उन परिस्थितियों के बारे में सबसे प्रारंभिक जानकारी है जिनके तहत अपराध किया गया था, जिसमें वास्तविक अपराधियों के नाम और उनके द्वारा निभाई गई भूमिका, हथियार, यदि कोई हो, और साथ ही चश्मदीद गवाहों के नाम, यदि कोई हो, शामिल हैं। एफआईआर दर्ज करने में देरी के परिणामस्वरूप दोषारोपण हो सकता है, जो बाद में सोचा गया

परिणाम है। यह निर्धारित करने की दृष्टि से कि क्या एफ.आई.आर. उस समय दर्ज की गई थी जब यह आरोप लगाया गया था कि एफ.आई.आर. दर्ज की गई है, अदालतें आम तौर पर कुछ बाहरी जांचों की तलाश करती हैं। इनमें से एक परीक्षण स्थानीय मजिस्ट्रेट द्वारा हत्या के मामले में एफआईआर की प्रति की रसीद है, जिसे हत्या के मामले में विशेष रिपोर्ट कहा जाता है। [पैरा 8] [59-ई-एच;60ए]

1.2. यह थाना अधिकारी का कर्तव्य है कि वह इलाका मजिस्ट्रेट को विशेष रिपोर्ट भेजे, जैसा कि सीआरपीसी की धारा 157(2) के तहत आवश्यक है। लेकिन एफआईआर भेजने और स्थानीय मजिस्ट्रेट द्वारा इसकी प्राप्ति में देरी के लिए अनेक कारक और परिस्थितियां हो सकती हैं। [पैरा 13] [61-ई-एफ]

1.3. एफआईआर भेजने में देरी अपने आप में कोई परिस्थिति नहीं है जो अभियोजन पक्ष के मामले को पूरी तरह से खारिज कर सकता हो, विशेषकर उन मामलों में जहां अभियोजन पक्ष एफआईआर के प्रेषण में देरी के लिए ठोस और उचित स्पष्टीकरण प्रदान करता है। [पैरा 10]

1.4. इस बारे में कोई सार्वभौमिक नियम बनाना संभव नहीं है कि एफआईआर दर्ज करने के बाद पुलिस थाना अधिकारी द्वारा कितने समय के भीतर विशेष रिपोर्ट भेजनी होगी। प्रत्येक मामला अपने स्वयं के तथ्यों पर आधारित होता है। [पैरा 12] [61-डी]

मेहराज सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य [1994] 5 एससीसी 188; अनिल राय बनाम बिहार राज्य, [2001] 7 एससीसी 318; अल्ला चाइना अप्पाराव एवं अन्य बनाम स्टेट ऑफ ए.पी. जेटी [2002] 8 एससी 167; बालाका सिंह और अन्य बनाम पंजाब राज्य एआईआर [1975] एससी [1962]; दातार सिंह बनाम पंजाब राज्य, [1975] 4 एससीसी 272 और बुध सिंह एवं अन्य बनाम स्टेट ऑफ यूपी जेटी (2006) 11 एससी 503, संदर्भित।

2.1. वर्तमान मामले में पीडब्ल्यू 1 की साक्ष्य में यह है कि वह साइकिल से पुलिस स्टेशन पहुंचा और घटना के डेढ़ घंटे के भीतर लिखित एफआईआर दर्ज कराई। घटनास्थल और थाने के बीच की दूरी करीब 9 किलोमीटर है, पीडब्ल्यू 1की साक्ष्य में यह है कि उसे अपनी रिपोर्ट तैयार करने में लगभग 15-20 मिनट लगे और रिपोर्ट तैयार करने में किसी ने उसे सलाह नहीं दी। वह अकेले ही पुलिस थाने पहुंच गया था। पीडब्ल्यू 1 द्वारा दिए गए इस संस्करण पर अविश्वास करने का कोई कारण नहीं है। पीडब्लू 1 द्वारा अपनी लिखित एफआईआर में घटना का विवरण बताने में कुछ भी अस्वाभाविक और असामान्य नहीं है। ऐसी परिस्थिति जैसी कि इस प्रकरण में हैं, में व्यक्तियों का व्यवहार पैटर्न और प्रतिक्रिया व्यक्ति-दर-व्यक्ति भिन्न हो सकती है। एफआईआर को पढ़ने से इसमें कुछ भी कृत्रिम नहीं लगता। जैसा कि अपीलकर्ता ने तर्क दिया है, कि यह काल्पनिक थी

और इसे उचित विचार-विमर्श के बाद अस्तित्व में लाया गया था । [पैरा 16] [62-सी-ई]

2.2. मौके पर ही जांच रिपोर्ट तैयार की गई और शव को पोस्टमार्टम के लिए भेज दिया गया। पूछताछ रिपोर्ट विशेष रूप से दिनांक 19.02.1977 को शाम 4.45 बजे पीडब्ल्यू 1 द्वारा एफआईआर दर्ज करने का उल्लेख करती है। केवल इस तथ्य का कोई महत्व नहीं है कि जांच रिपोर्ट में अपराध संख्या का उल्लेख नहीं किया गया है। [पैरा 17] [61-एफ-जी]

2.3. घटनाओं का क्रम, अर्थात्, पीडब्लू 7, थाना अधिकारी पुलिस थाना कोठी-शाम छह बजे घटना स्थल पर पहुंचा और शाम 4.45 बजे पीडब्ल्यू 1 द्वारा एफआईआर दर्ज करवाने के बारे में हवाला देते हुए विधिवत जांच रिपोर्ट तैयार की गई। 19 फरवरी, 1977 को शव को अस्पताल भेजा गया जो रात 9.30 बजे तक अस्पताल पहुंच गया। और 20 फरवरी, 1977 को सुबह 9.30 बजे पोस्टमार्टम रिपोर्ट से यह स्पष्ट और सुस्पष्ट शब्दों में पता चलता है कि एफआईआर उसी समय दर्ज की गई थी जब इसे दर्ज किया जाना बताया गया था। इसे पूर्व-समय और पूर्व-दिनांकित नहीं माना जा सकता। [पैरा 18] [62-एच;63-ए]

3.1. 19 फरवरी,1977 को अपराह्न 3.00 बजे दो कांस्टेबलों द्वारा मैकू भुजवा नामक व्यक्ति की गिरफ्तारी अपराध क्रमांक 17 में धारा 147 आदि

के तहत शाम करीब 5.30 बजे करते हुए थाने में दाखिल किया गया। एफआईआर के समय को चुनौती देने के लिए एक शीट एंकर के रूप में इस्तेमाल किया गया है, यह कहकर कि यदि दोनों कांस्टेबलों को घटना स्थल पर पहुंचने पर थाना अधिकारी द्वारा बुलाया गया था, तो संभवतया थाना अधिकारी दोपहर 3.00 बजे तक यहाँ तक की एफआईआर जारी होने से पहले ही घटना स्थल पर पहुंच गए थे।[पैरा 19] [63-सी-डी]

3.2. उच्च न्यायालय ने मामले के इस पहलू पर ध्यान देते हुए कहा कि जांच अधिकारी पीडब्लू 7 यह नहीं कहता है कि उसने मैकू भुजवा को गिरफ्तार किया था। इसके अलावा, मैकू की गिरफ्तारी संबंधित हत्या के सिलसिले में नहीं, बल्कि एक अन्य मामले के सिलसिले में हुई थी। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि घटना के समय पीडब्लू 7 के मौके पर पहुंचने में देरी के पीछे क्या उद्देश्य हो सकता है, यह स्पष्ट नहीं किया गया है। दो कांस्टेबलों द्वारा दोपहर करीब तीन बजे मैकू की गिरफ्तारी करना और शाम 5.30 बजे उसे हवालात में दाखिल करना एफआईआर में अंकित समय के विरुद्ध नहीं कहा जा सकता हैं, जैसा कि पुलिस कागजात में दिखाया गया है। यह भी संभव है कि मैकू की गिरफ्तारी के संदर्भ में कुछ हेरफेर किया गया हो, ताकि उसके खिलाफ मामले को और अधिक मजबूत बनाया जा सके।[पैरा 20] [63-ई-एफ]

4.1. अभियोजन की कहानी पूरी तरह से पीडब्लू संख्या 1, 2 और 3 की प्रत्यक्ष साक्ष्य पर आधारित है। पीडब्लू-1 कोई और नहीं बल्कि मृतक का बेटा है। वह घटनास्थल के पास स्थित अपने खेतों में मौजूद थे जहां उसके पिता पर हमला किया गया था। इसमें कोई संदेह नहीं हैं,कि पीडब्लू-1 लखनउ में जी.एन.एस में अपना अंशकालिक पौधारोपण कर रहा था, लेकिन इससे उस दुर्भाग्यवादी दिवस पर अपराध स्थल पर उसकी उपस्थिति संदिग्ध नहीं हो जाएगी । बचाव पक्ष द्वारा की गई जिरह में अपराध स्थल पर पीडब्लू-1 की मौजूदगी के बारे में बचाव पक्ष कोई संदेह स्थापित नहीं कर पाया । घटना स्थल पर पीडब्लू-1 के आचरण में कुछ भी अप्राकृतिक नहीं है। उसने हमले के तरीके और प्रत्येक आरोपी द्वारा निभाई गई भूमिका के बारे में विस्तृत विवरण दिया। प्रथम सूचना रिपोर्ट में ही चश्मदीद गवाह के तौर पर पीडब्लू-2 और पीडब्लू-3 का नाम भी दर्ज किया गया था। इन परिस्थितियों में, पीडब्लू-2 और पीडब्लू-3 को आकस्मिक गवाह के रूप में नहीं माना जा सकता है। विचारण न्यायालय और साथ ही उच्च न्यायालय ने घटना के चश्मदीदों के रूप में पीडब्लू-2 और पीडब्लू-3 की गवाही पर भरोसा करने में कोई गलती नहीं की, जो पीडब्लू-1 की गवाही से पूरी तरह से पुष्ट है। पीडब्लू-2 और पीडब्लू-3 को यह सुझाव तक भी नहीं दिया गया कि उनकी आरोपी व्यक्तियों के प्रति कोई दुश्मनी हो। वे स्वतंत्र गवाह हैं और उनके पास आरोपियों के खिलाफ बोलने का कोई कारण नहीं है। [पैरा 22] [64-बी-ई]

4.2. यह तर्क कि अपराध के स्थान पर पीडब्लू-1 की उपस्थिति अत्यधिक संदिग्ध थी क्योंकि उसने अपने पिता को और अधिक हमले से बचाने के लिए कोई भी प्रयास नहीं किया, बिना किसी तथ्य के है। पीडब्लू-1 की साक्ष्य में यह है कि सभी चार गोलियाँ तेजी से चलाई गईं और उस समय पीडब्लू-1 हमले के वास्तविक स्थान से कुछ दूरी पर था। विशेष रूप से कम से कम 2 आरोपी आग्नेयास्त्रों से लैस थे और एक लाठी से लैस था और वे सभी बेधड़क हथियारों का इस्तेमाल कर रहे थे। ऐसी परिस्थितियों में, पीडब्लू-1 ने मैदान में कूदने और अपनी जान जोखिम में डालने का साहस नहीं जुटाया होगा। ऐसी स्थिति में किसी व्यक्ति का सामान्य या स्वाभाविक आचरण क्या हो सकता है, इसकी भविष्यवाणी करना या कोई राय व्यक्त करना बहुत मुश्किल है। ऐसी परिस्थितियों में व्यक्तियों की प्रतिक्रिया अलग-अलग व्यक्तियों में भिन्न हो सकती है। साक्ष्य को अस्वीकार करना या उस आधार पर पीडब्लू-1 की उपस्थिति पर संदेह करना संभव नहीं है।[पैरा 23] [64-एफ-एच;65 ए]

5.1. पीडब्लू 5 की चोट संख्या 1 की प्रकृति के संबंध में जिरह में पूछे गए एक प्रश्न के उत्तर में, चिकित्सा अधिकारी ने कहा कि उक्त चोट केवल गोली के कारण हुई थी। अपीलकर्ता ने तर्क दिया कि पीडब्लू-1 के अनुसार भी अभियुक्तों के हाथ में हथियार 12 बोर की बंदूकें थीं, न कि कोई पिस्तौल या रिवॉल्वर और हमलावरों के हाथ में जिन आग्नेयास्त्रों का आरोप लगाया गया था उनसे कोई गोली नहीं लग सकती थी। इस दलील

में कोई दम नहीं है चिकित्सा अधिकारी बैलिस्टिक विशेषज्ञ नहीं है। उससे इस बात का जवाब देने की उम्मीद नहीं की जा सकती थी कि क्या चोट संख्या 1 अकेले गोली से कारित की जा सकती थी और उस सीमा तक उनकी राय का कोई महत्व नहीं है। चिकित्सकीय साक्ष्य के आधार पर पीडब्लू-1, 2 और 3 के साक्ष्य और घटना स्थल पर उनकी उपस्थिति पर अविश्वास करना संभव नहीं है। उच्च न्यायालय ने ठीक ही कहा कि चोट संख्या 1 और क्या वह गोली या गोली से लगी थी, के संबंध में विवाद बिना किसी आधार के है।[पैरा 25] [65-एफ-एच;66-ए-डी]

5.2. चिकित्सा साक्ष्य केवल राय का सबूत है और यह निर्णायक नहीं है और जब मौखिक साक्ष्य चिकित्सा राय के साथ असंगत पाया जाता है तो एक या दूसरे पर भरोसा करने का सवाल प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करेगा। इसके लिए कोई कठोर नियम नहीं बनाया जा सकता। यदि अन्यथा स्वीकार्य है तो चक्षुदर्शी साक्ष्य को चिकित्सा से अधिक महत्व दिया जाना चाहिए। [पैरा 25] [66-ए-बी]

6. राज्य ने सही तर्क दिया कि सामान्य उद्देश्य को आगे बढ़ाने के लिए पीड़ित पर गैरकानूनी सभा के सदस्यों द्वारा हमले के मामले में अभियोजन पक्ष के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वह प्रत्येक आरोपी के प्रत्यक्ष कृत्य को स्थापित करे। ध्यान देने योग्य बात यह है कि ए-1 जिसने दो गोलियां चलाई थीं उसे सत्र न्यायालय द्वारा दोषी ठहराया गया

था, उसने अपनी दोषसिद्धि को उच्च न्यायालय में चुनौती भी नहीं दी। अपीलकर्ताओं को आईपीसी की धारा 149 की सहायता से पढ़ी गई धारा 302 के तहत सही तरीके से दोषी ठहराया गया है। पीडब्लू-5 ने अपनी साक्ष्य में कहा कि मृतक को लगी सभी चोटें बंदूक से लगी थीं। आगे कहा गया है कि "मृतक के शरीर से एक गोली, एक कवर 'टिकली', दो डाट और 40 छर्रे शॉट निकाले गए, पैकेट में डाले गए और सील कर दिए गए....." यह भी कहा गया है इस बात के सबूत हैं कि मृतक के शरीर पर आई चोटें सामान्य तौर पर मौत का कारण बनने के लिए पर्याप्त थीं। चिकित्सीय साक्ष्य के इस भाग को यदि पीडब्लू-1, 2 और 3 के मौखिक साक्ष्य के साथ मिलाया जाए तो इस प्रश्न पर विचार करना अनावश्यक हो जाता है कि किस अभियुक्त ने कौन सी चोट पहुंचाई और उनमें से कौन सी चोट घातक थी। एक बार जब किसी गैरकानूनी जमावड़े की सदस्यता स्थापित हो जाती है, तो आईपीसी की धारा 149 की सहायता से दायित्व तय करने के लिए किसी भी आरोपी पर कोई विशिष्ट प्रत्यक्ष कृत्य स्थापित करना अभियोजन पक्ष के लिए बाध्य नहीं है। विधि विरूद्ध जमाव के प्रत्येक सदस्य द्वारा ओवर एक्ट कार्य करना आवश्यक नहीं है। वर्तमान मामले में अभियुक्तों की गैरकानूनी सभा का सामान्य उद्देश्य इस तथ्य से स्पष्ट है कि उनमें से कुछ घातक हथियारों से लैस थे। उनमें से कोई भी 19.2.1977 को अपराह्न 3.30 बजे खेले गए भयानक नाटक का जिज्ञासु दर्शक या दर्शक नहीं था। गलियारा, गांव बादीपुर में। [पैरा 26] [66-ई-एच;67-ए]

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकारः आपराधिक अपील संख्या. 402/ 2006

इलाहाबाद, उच्च न्यायालय, बेंच लखनऊ के दांडिक अपील संख्या 367/1980 में पारित अंतिम निर्णय और आदेश दिनांक 17.5.2005 में जो दिया गया।

अपीलार्थीयों के लिये हरजिंदर सिंह, आर०सी० कोहली, शिखा त्यागी और सीमा जुनैजा।

प्रत्यथीर्यों के लिये साहिल कुमार द्विवेदी, एडिशलन एडवोकेट जनरल, ए०के० झा, प्रशांत चौधरी, वंदना मिश्रा और मनोज दिवेदी।

न्यायालय द्वारा निर्णय अभिनिर्धारित किया गया :-

बी. सुदर्शन रेड्डी, जे. यह अपील अपीलकर्ताओं-महमूद और खालिक द्वारा विशेष अनुमति द्वारा की गई एक अपील है। अपीलकर्ता- महमूद को आईपीसी की धारा 149 के साथ पढ़ी जाने वाली धारा 302 के तहत दंडनीय अपराध के लिए दोषी ठहराया गया है और आजीवन कारावास की सजा सुनाई गई है। उसे आईपीसी की धारा 148 के तहत भी दोषी ठहराया गया और डेढ़ साल के कठोर कारावास की सजा सुनाई गई। दूसरे अपीलकर्ता को धारा 149 के साथ पढ़ी गई धारा 302 के तहत दंडनीय अपराध के लिए दोषी ठहराया गया है और आजीवन कारावास की सजा सुनाई गई है। उसे आईपीसी की धारा 147 के तहत दोषी ठहराया गया और

एक साल के कठोर कारावास की सजा सुनाई गई और आईपीसी की धारा 379 के तहत उसे दोषी ठहराया गया और दो साल की अवधि के लिए कठोर कारावास की सजा सुनाई गई।

संक्षेप में कहें तो अभियोजन का मामला इस प्रकार हैः-

19 फरवरी 1977 को शाम करीब 4.45 बजे आरोपी राम समुझ और महमूद- अपीलकर्ता नंबर 1 दोनों बंदूकों से लैस, खालिद-अपीलकर्ता नंबर 2, बजरंग और एक अज्ञात व्यक्ति लाठी से लैस मृतक राम सिंह पर गलियारा में राम सेवक अहीर के खेत के पास उस समय हमला किया गया, जब वह अपनी मोटरसाइकिल से अपने गांव बादीपुर लौट रहा था। आरोप है कि आरोपी राम समुझ और महमूद ने चार गोलियां चलाईं, जिससे मृतक घायल होकर गिर पड़ा और उसके बाद खालिक ने मृतक की लाइसेंसी रिवाल्वर छीन ली और पांचों मौके से भाग गए। राम सिंह की मौके पर ही मौत हो गई। जानलेवा हमले की यह घटना जयकीरत सिंह (पीडब्लू 1) ने देखी थी, जो कोई और नहीं बल्कि मृतक राम सिंह का बेटा है, बोदीपुर के सुजेरपुर गांव के निवासी राम रतन (पी डब्लू 2) और राम आधार (पी डब्लू 3) पीडब्लू 1 ने उसी दिन शाम 4.45 बजे लिखित प्राथमिकी प्रदर्श क 1 हैं, दर्ज कराई है जिसमें सभी आरोपियों के नाम बताएं और किस तरह से मृतक पर जानलेवा हमला किया गया बताया गया । जगदम्बा प्रसाद द्विवेदी (पी डब्लू 7) कार्यालय प्रभारी पुलिस स्टेशन

कोठी शाम करीब छह बजे घटनास्थल पर पहुंचे और जिसे राम सेवक अहीर के खेत के पास गलियारा में राम सिंह का शव और उसकी मोटरसाइकिल मिली। घटनास्थल से मृतक की खोपड़ी के टूटे हुए टुकड़े और टूटे हुए तीन दांत जब्त किये गये, मौके से छूटा हुआ कारतूस और टिकली भी जब्त कर ली गई। पी.डब्ल्यू-7 ने जांच रिपोर्ट (प्रदर्श क. 7) तैयार करने के बाद शव को पोस्टमार्टम के लिए भेज दिया। डॉ. आर.एस. कटियार पीडब्लू- 5 ने 20 फरवरी, 1977 को सुबह लगभग 9.45 बजे शव का पोस्टमार्टम किया, और मृत्यु-पूर्व बंदूक की गोली के पांच घाव पाए गए। मृतक के मस्तिष्क से कारतूस का ढक्कन निकाला गया। खोपड़ी की हड्डियाँ टूटी हुई पाई गईं। यह भी पाया गया कि मृतक के पेरिटोनियम, लीवर, किडनी जैसे महत्वपूर्ण अंग बुरी तरह टूट गए थे। डॉक्टर की राय में मौत का कारण सदमा और मृत्यु पूर्व चोटों के कारण रक्तस्राव था। मार्च 1977 के पहले सप्ताह में मामले की जांच सीबी सीआईडी को स्थानांतरित कर दी गई। इंस्पेक्टर एम.एल. गौतम ने बाकी जांच पूरी कर अपीलकर्ताओं और अन्य आरोपियों के खिलाफ आरोप पत्र दायर किया।

आरोपियों ने अपने खिलाफ लगाए गए आरोपों से इनकार किया है और दलील दी है कि उन्हें दुश्मनी के कारण झूठा फंसाया गया है। तदनुसार आरोपियों पर मुकदमा चलाया गया। अभियोजन पक्ष ने अपना मामला स्थापित करने के लिए कुल मिलाकर 8 गवाहों और 39 दस्तावेजों को प्रदर्श क 1-39 के रूप में प्रदर्शित करवाया। अभियोजन पक्ष द्वारा

परीक्षित करवाये गए गवाहों में से, जयकीरथ सिंह, राम रतन और राम आधार क्रमशः (पी.डब्ल्यू 1,2 और 3) मृतक पर जानलेवा हमले के पूर्व गवाह थे। आरोपी पक्ष ने भी अपनी बचाव साक्ष्य में वीरेंद्र सिंह को डी.डब्लू. 1, लक्ष्मी नारायण सिन्हा को डी.डब्लू. 2 और बिंद्रा चारण को डी.डब्लू. 3 के रूप में परीक्षित करवाया।

विद्वान सत्र न्यायाधीश ने मौखिक साक्ष्य और रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्री की सराहना के बाद सभी आरोपियों को उनके खिलाफ लगाए गए आरोपों का दोषी पाया और उन्हें विभिन्न कारावास की सजा सुनाई। इलाहाबाद उच्च न्यायालय में पेश की गई अपील में विद्वान सत्र न्यायाधीश द्वारा की गई दोषसिद्धि और सजा की पुष्टि की। अपीलकर्ता जो क्रमशः आरोपी नंबर 2 और 3 हैं, ने अपनी दोषसिद्धि और सजा को चुनौती देते हुए विशेष अनुमति द्वारा यह अपील पेश की है।

हमने विद्वान वरिष्ठ वकील श्री हरजिंदर सिंह और श्री आर.सी. कोहली के साथ-साथ राज्य के विद्वान अतिरिक्त महाधिवक्ता श्री शैल कुमार द्विवेदी को विस्तार से सुना है।

विद्वान वरिष्ठ वकील श्री हरजिंदर सिंह ने मुख्य रूप से तर्क दिया कि पी.डब्ल्यू 1 जयकीरथ सिंह द्वारा दर्ज की करवाई गई एफआईआर पूर्व समय और पूर्व-दिनांकित थी और पुलिस के साथ उचित विचार-विमर्श और परामर्श के बाद अस्तित्व में लाई गई थी।

वरिष्ठ वकील के अनुसार, आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 157 के तहत विशेष रिपोर्ट वरिष्ठ अधिकारियों को भेजी जानी आवश्यक थी और इसकी एक प्रति पुलिस द्वारा इलाका मजिस्ट्रेट को निरीक्षण के लिये भी भेजी जानी थी, जो पुलिस द्वारा नहीं भेजी गई थी। इसके अलावा दोपहर 3.40 बजे से पहले मैकू भुजवा की गिरफ्तारी हुई। और शाम 5.30 बजे पुलिस स्टेशन में उनकी हिरासत और यह तथ्य भी कि जांच अधिकारी द्वारा उसी दिन तैयार किए गए कुछ जब्ती मेमो, जिनमें कोई अपराध संख्या नहीं है, एफआईआर प्रदर्श क1 के समय पर संदेह करने के लिए पर्याप्त से अधिक हैं।

इसमें कोई संदेह नहीं है कि एक आपराधिक मामले में और विशेष रूप से हत्या के मामले में एफआईआर मुकदमे में अभियोजन पक्ष के नेतृत्व में साक्ष्य की सराहना करने के उद्देश्य से साक्ष्य का एक महत्वपूर्ण और मूल्यवान टुकड़ा है। एफआईआर उन परिस्थितियों के बारे में सबसे प्रारंभिक जानकारी है जिनके तहत अपराध किया गया था, जिसमें वास्तविक अपराधियों के नाम और उनके द्वारा निभाई गई भूमिका, हथियार, यदि कोई हो, और साथ ही चश्मदीदों के नाम, यदि कोई हों, शामिल हैं। एफआईआर दर्ज करने में देरी के परिणामस्वरूप अपमान हो सकता है, जो बाद में सोचा गया प्राणी है। मेहराज सिंह बनाम यूपी राज्य [1994] 5 एस सी 188 में इस अदालत ने यह निर्धारित करने के लिए कि क्या एफआईआर उस समय पर दर्ज की गई थी जिस समय यह कथित

तौर पर दर्ज करना बताया गया हैए आम तौर पर अदालते कुछ बाहरी जाँच के माध्यम से इसकी तलाश करती हैं। इनमें से एक परीक्षण स्थानीय मजिस्ट्रेट द्वारा हत्या के मामले में एफआईआर की प्रति की रसीद है, जिसे हत्या के मामले में विशेष रिपोर्ट कहा जाता है। "यदि यह रिपोर्ट मजिस्ट्रेट को देर से प्राप्त होती है तो इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि जिस समय एफआईआर दर्ज की गई है, उस समय एफआईआर दर्ज नहीं करवाई गई थी, जब तक कि निश्चित रूप से, अभियोजन पक्ष स्थानीय मजिस्ट्रेट के पास एफआईआर की प्रति भेजने या इसकी रसीद प्राप्त करने में देरी के लिए संतोषजनक स्पष्टीकरण पेश नहीं कर देता हैं। दूसरी बाहरी जांच भी उतनी ही महत्वपूर्ण है, शव के साथ एफआईआर की प्रति भेजना और जांच रिपोर्ट में उसका संदर्भ देना।"

इस अदालत ने अनिल राय बनाम बिहार राज्य [2001] 7 एससीसी 318 में दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 157 की व्याख्या करते हुए कहा कि उक्त प्रावधान मजिस्ट्रेट को ऐसे संज्ञेय अपराध की जांच के बारे में सूचित रखने के लिए बनाया गया है ताकि वह जांच को नियंत्रित करने में सक्षम हो सके और यदि आवश्यक हो तो संहिता की धारा 159 के तहत उचित निर्देश दे सकें। "लेकिन जहां दिखाया गया है कि एफआईआर वास्तव में बिना किसी देरी के दर्ज की गई है और एफआईआर के आधार पर जांच शुरू हुई है, वहां यदि मजिस्ट्रेट को एफआईआर की प्रति भेजने में देरी हुई

हैं, तो भी अपने आप में इस निष्कर्ष को उचित नहीं ठहराया जा सकता हैं, कि जाँच ख़राब थी और अभियोजन समर्थनहीन था ''

इस अदालत ने आगे यह विचार किया कि एफआईआर की प्रामाणिकता पर संदेह करने के लिए संहिता की धारा 157 के तहत विचार की गई देरी हर देरी नहीं है, बल्कि केवल असाधारण और अस्पष्टीकृत देरी ही देरी है। हम इस विषय पर विभिन्न आधिकारिक घोषणाओं के साथ अपने इस संक्षिप्त निर्णय पर बोझ डालने का प्रस्ताव नहीं करते हैं क्योंकि कानून इतनी अच्छी तरह से तय है कि एफआईआर भेजने में देरी अपने आप में एक ऐसी परिस्थिति नहीं है जो अभियोजन पक्ष के मामले को पूरी तरह से खारिज कर सकती है, विशेषकर ऐसे मामलों में जहां अभियोजन पक्ष एफआईआर भेजने में देरी के लिए ठोस और उचित स्पष्टीकरण प्रदान करता है।

इसी सिद्धांत को इस अदालत ने अल्ला चाइना अप्पाराव और अन्य बनाम आंध्र प्रदेश राज्य जे टी (2002) 8 एस सी 167 में दोहराया है, जिसमें इस अदालत ने आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा (1) में "तुरंत" अभिव्यक्ति का अर्थ लगाते हुए कहा था कि "यह सामान्य बात और अनुभव रहा है कि अपराध में जबरदस्त वृद्धि के परिणामस्वरूप भारी मात्रा में काम करना पड़ता हैं, लेकिन पुलिस बल में उसी अनुपात में वृद्धि नहीं की गई है। उपरोक्त कारकों को ध्यान में रखते हुए, धारा 157 (1) के अर्थ

में ''तुरंत'' अभिव्यक्ति का स्पष्ट रूप से यह अर्थ नहीं हो सकता है कि अभियोजन पक्ष को मजिस्ट्रेट को पहली सूचना रिपोर्ट भेजने में हर घंटे की देरी के बारे में स्पष्टीकरण देना आवश्यक हो, निश्चित रूप से उचित प्रेषण के साथ भेजा जाना चाहिए, जिसका स्पष्ट अर्थ मौजूदा परिस्थितियों में उचित संभव समय के भीतर होगा। इसलिए, हमारे विचार में, प्रथम सूचना रिपोर्ट उचित तत्परता के साथ मजिस्ट्रेट को भेजी गई थी और उसे मजिस्ट्रेट को अग्रेषित करने में कोई देरी नहीं की गई थी। मामले के किसी भी दृष्टिकोण से, भले ही मजिस्ट्रेट की अदालत बंद हो गई हो और प्रथम सूचना रिपोर्ट उसके दर्ज होने के छह घंटे के भीतर उसके पास पहुंच गई हो, काम के बोझ में वृद्धि को देखते हुए, हमें यह कहने में कोई संकोच नहीं है कि ऐसे में भी ऐसे मामले में यह नहीं कहा जा सकता कि मजिस्ट्रेट को प्रथम सूचना रिपोर्ट अग्रेषित करने में कोई देरी हुई थी।''

इस बारे में कोई सार्वभौमिक नियम बनाना संभव नहीं है कि एफआईआर दर्ज करने के बाद थाना अधिकारी द्वारा कितने समय के भीतर विशेष रिपोर्ट भेजनी होगी, इस संबंध में प्रत्येक मामला अपने स्वयं के तथ्यों पर आधारित होता हैं।

विद्वान वरिष्ठ वकील ने हमारा ध्यान हमारे पूर्व निर्णयों की ओर आकर्षित किया जिनमें बालाका सिंह और अन्य बनाम पंजाब राज्य एआइआर (1975) एस सी 1962 और दातार सिंह बनाम पंजाब राज्य'

[1975] 4 एस सी 272 जिसमें इस अदालत ने इलाका मजिस्ट्रेट को विशेष रिपोर्ट भेजने के महत्व पर प्रकाश डाला। इस प्रस्ताव पर कोई विवाद नहीं है कि इलाका मजिस्ट्रेट को विशेष रिपोर्ट भेजना पुलिस थाना प्रभारी का कर्तव्य है, जैसा कि आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 157 (2) में निहित हैं। लेकिन एफआईआर भेजने और स्थानीय मजिस्ट्रेट द्वारा इसकी प्राप्ति में देरी के लिए कई कारक और परिस्थितियां हो सकती हैं। जिन मामलों में जांच एजेंसियों की ओर से कोई संतोषजनक और उचित स्पष्टीकरण नहीं मिलता है, वहां एफआईआर का अस्तित्व और उसका समय संदिग्ध हो सकता है।

बुध सिंह एवं अन्य बनाम यूपी राज्य,.जे टी(2006) 11 एस सी 503 में इस न्यायालय दवारा यूपी राज्य द्वारा बनाए गए नियमों का संदर्भ देते हुए यू.पी. पुलिस अधिनियम के नियमों को वैधानिक प्रकृति का माना। नियम यह प्रक्रिया प्रदान करते हैं कि किसी पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी को दी गई संज्ञेय अपराध से संबंधित जानकारी को कैसे और किस रूप में दर्ज किया जाना चाहिए और वरिष्ठ अधिकारियों को भेजा जाना चाहिए। नियम प्रकृति में प्रक्रियात्मक हैं जिनका अर्थ पुलिस के मार्गदर्शन के लिए है, ये विनियम दंड प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों का प्रतिस्थापन नहीं बल्कि पूरक हैं।

अब हम वर्तमान मामले के तथ्यों पर विचार करेंगे और इस न्यायालय द्वारा पूर्व में एक से अधिक निर्णयों में घोषित कानून को लागू करेंगे।

जयकीरथ सिंह (पीडब्लू 1) की साक्ष्य में यह है कि वह साइकिल से पुलिस स्टेशन पहुंचा और घटना के डेढ़ घंटे के भीतर लिखित एफआईआर प्रदर्श क. 1 दर्ज कराई। घटनास्थल और थाने के बीच की दूरी करीब 9 किलोमीटर है। उसकी साक्ष्य में यह है कि उसने अपनी रिपोर्ट तैयार करने में लगभग 15.20 मिनट का समय लिया और रिपोर्ट तैयार करने में उसे किसी ने सलाह नहीं दी। वह अकेले ही थाने चला गया। हमें पीडब्लू 1 द्वारा दिए गए इस संस्करण पर अविश्वास करने का कोई कारण नहीं मिलता है पीडब्लू 1 द्वारा दर्ज करवाई गई लिखित एफआईआर प्रदर्श क. 1. में घटना के विवरण के बारे में कुछ भी अस्वाभाविक और असामान्य नहीं है। ऐसी परिस्थिति जैसा कि इस केस में हैं, जैसी परिस्थिति में व्यवहार और प्रतिक्रिया व्यक्ति-दर-व्यक्ति भिन्न हो सकते हैं। एफआईआर प्रदर्श क1 को पढने से हमें इसमें कुछ भी कृत्रिम नहीं लगता। जैसा कि अपीलकर्ता के वकील ने तर्क दिया है, कि इसे उचित विचार-विमर्श के बाद अस्तित्व में लाया गया, यह नहीं कहा जा सकता है।

विदित हो कि, पुलिस थाना कोठी के प्रभारी अधिकारी, जगदम्बा प्रसाद द्विवेदी, पीडब्लू 7, ग्राम सेठमऊ में संबंधित कागजात प्राप्त करने के

बाद लगभग 6.00 बजे शाम को घटनास्थल पर पहुंचा, जहां उसे राम सिंह का शव मिला। जांच रिपोर्ट प्रदर्श क 7 मर्ग मौके पर कायम कर शव को पोस्टमार्टम के लिए भेज दिया गया। पूछताछ रिपोर्ट प्रदर्श क 7 विशेष रूप से 19.02.1977 को शाम 4.45 बजे पीडब्लू 1 द्वारा एफआईआर दर्ज करवाने को संदर्भित करता है। जांच रिपोर्ट में अपराध संख्या का उल्लेख नहीं किया गया हैं, केवल इस तथ्य का कोई महत्व नहीं है।

घटनाओं का क्रम, अर्थात्, जगदम्बा प्रसाद द्विवेदी- पीडब्लू 7 शाम 6.00 बजे अपराध स्थल पर पहुंचे और शाम 4.45 बजे पीडब्ल्यू 1 द्वारा एफआईआर दर्ज करवाने के बारे में विधिवत उल्लेख करते हुए इंक्वेस्ट रिपोर्ट 19 फरवरी, 1977 को तैयार की। शव को अस्पताल भेजा गया जो रात 9.30 बजे तक अस्पताल पहुंच गया और 20 फरवरी, 1977 को सुबह 9.30 बजे पोस्टमार्टम जांच के अवलोकन से स्पष्ट और स्पष्ट शब्दों में पता चलता है कि एफआईआर उसी समय दर्ज की गई थी जब इसे दर्ज किया जाना बताया गया था। इसे पूर्व-समय और पूर्व-दिनांकित नहीं माना जा सकता। यह ध्यान रखना आवश्यक है कि 20 फरवरी, 1977 को रविवार होने के कारण, इलाका मजिस्ट्रेट को 21 फरवरी, 1977 को विशेष रिपोर्ट प्राप्त हुई। विशेष रिपोर्ट डाक द्वारा भेजी गई थी।

19 फरवरी, 1977 को अपराह्न 3.00 बजे दो कांस्टेबलों द्वारा मैकू भुजवा नामक व्यक्ति की गिरफ्तारी अपराध क्रमांक 17 में धारा 147 आदि

के तहत शाम करीब 5.30 बजे करते हुए थाने में दाखिल किया गया। एफआईआर के समय को चुनौती देने के लिए एक शीट एंकर के रूप में इस्तेमाल किया गया हैए यह कहकर कि यदि दोनों कांस्टेबलों को घटना स्थल पर पहुंचने पर थाना अधिकारी द्वारा बुलाया गया थाए तो संभवतया थाना अधिकारी दोपहर 3.00 बजे तक यहाँ तक की एफआईआर जारी होने से पहले ही घटना स्थल पर पहुंच गए थे।

उच्च न्यायालय ने मामले के इस पहलू पर ध्यान देते हुए कहा कि जांच अधिकारी पीडब्लू 7 यह नहीं कहता है कि उसने मैकू भुजवा को गिरफ्तार किया था। इसके अलावा, मैकू की गिरफ्तारी संबंधित हत्या के सिलसिले में नहीं, बल्कि एक अन्य मामले के सिलसिले में हुई थी। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि घटना के समय पीडब्लू 7 के मौके पर पहुंचने में देरी के पीछे क्या उद्देश्य हो सकता हैए यह स्पष्ट नहीं किया गया है। दो कांस्टेबलों द्वारा दोपहर करीब तीन बजे मैकू की गिरफ्तारी करना और शाम 5.30 बजे उसे हवालात में दाखिल करना एफआईआर में अंकित समय के विरुद्ध नहीं कहा जा सकता हैं, जैसा कि पुलिस कागजात में दिखाया गया है। यह भी संभव है कि मैकू की गिरफ्तारी के संदर्भ में कुछ हेरफेर किया गया हो, ताकि उसके खिलाफ मामले को और अधिक मजबूत बनाया जा सके।

हमें उच्च न्यायालय के तर्क में कोई भ्रांति या त्रुटि नहीं दिखती। उपरोक्त कारणों से हमें एफआईआर के पूर्व समय और पूर्व-दिनांक के बारे में विद्वान वरिष्ठ वकील द्वारा की गई दलील में कोई तथ्य नहीं मिला। इस संबंध में सत्र न्यायाधीश और उच्च न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्ष स्वीकार्य साक्ष्य द्वारा समर्थित हैं और अलग दृष्टिकोण अपनाने का कोई कारण नहीं है। यह अच्छी तरह से स्थापित है कि यह अदालत आम तौर पर सबूतों की दोबारा सराहना नहीं करती है जब तक कि यह नहीं दिखाया जाता है कि निष्कर्ष, स्पष्ट रूप से गलत या विकृत प्रकृति के हैं। हालाँकि, खुद को संतुष्ट करने के लिए हमने पीडब्लू 1, 2, 3 और 7 के साक्ष्यों पर गौर किया है और हम संतुष्ट हैं कि अभियोजन पक्ष द्वारा बताई गई तारीख और समय पर एफआईआर दर्ज की गई थी।

अभियोजन की कहानी पूरी तरह से पीडब्लू संख्या 1, 2 और 3 की प्रत्यक्ष साक्ष्य पर आधारित है। पीडब्लू-1 कोई और नहीं बल्कि मृतक का बेटा है। वह घटनास्थल के पास स्थित अपने खेतों में मौजूद थे जहां उसके पिता पर हमला किया गया था। इसमें कोई संदेह नहीं हैं, कि पीडब्लू.1 लखनउ में जी.एन.एस. में अपना अंशकालिक पौधारोपण कर रहा था, लेकिन इससे उस दुर्भाग्यवादी दिवस पर अपराध स्थल पर उसकी उपस्थिति संदिग्ध नहीं हो जाएगी । बचाव पक्ष द्वारा की गई जिरह में अपराध स्थल पर पीडब्लू-1 की मौजूदगी के बारे में बचाव पक्ष कोई संदेह स्थापित नहीं कर पाया । घटना स्थल पर पीडब्लू-1 के आचरण में कुछ भी

अप्राकृतिक नहीं है। उसने हमले के तरीके और प्रत्येक आरोपी द्वारा निभाई गई भूमिका के बारे में विस्तृत विवरण दिया। प्रथम सूचना रिपोर्ट में ही चश्मदीद गवाह के तौर पर पीडब्लू-2 और पीडब्लू-3 का नाम भी दर्ज किया गया था। इन परिस्थितियों में, पीडब्लू-2 और पीडब्लू-3 को आकस्मिक गवाह के रूप में नहीं माना जा सकता है। विचारण न्यायालय और साथ ही उच्च न्यायालय ने घटना के चश्मदीदों के रूप में पीडब्लू-2 और पीडब्लू-3 की गवाही पर भरोसा करने में कोई गलती नहीं की, जो पीडब्लू-1 की गवाही से पूरी तरह से पुष्ट है। पीडब्लू-2 और पीडब्लू-3 को यह सुझाव तक भी नहीं दिया गया कि उनकी आरोपी व्यक्तियों के प्रति कोई दुश्मनी हो। वे स्वतंत्र गवाह हैं और उनके पास आरोपियों के खिलाफ बोलने का कोई कारण नहीं है।

यह तर्क कि अपराध के स्थान पर पीडब्लू-1 की उपस्थिति अत्यधिक संदिग्ध थी क्योंकि उसने अपने पिता को और अधिक हमले से बचाने के लिए कोई भी प्रयास नहीं किया, बिना किसी तथ्य के है। पीडब्लू-1 की साक्ष्य में यह है कि सभी चार गोलियाँ तेजी से चलाई गईं और उस समय पीडब्लू-1 हमले के वास्तविक स्थान से कुछ दूरी पर था। विशेष रूप से कम से कम 2 आरोपी आग्नेयास्त्रों से लैस थे और एक लाठी से लैस था और वे सभी बेधड़क हथियारों का इस्तेमाल कर रहे थे। ऐसी परिस्थितियों में, पीडब्लू-1 ने मैदान में कूदने और अपनी जान जोखिम में डालने का साहस नहीं जुटाया होगा। ऐसी स्थिति में किसी व्यक्ति का सामान्य या

स्वाभाविक आचरण क्या हो सकता है, इसकी भविष्यवाणी करना या कोई राय व्यक्त करना बहुत मुश्किल है। ऐसी परिस्थितियों में व्यक्तियों की प्रतिक्रिया अलग-अलग व्यक्तियों में भिन्न हो सकती है। साक्ष्य को अस्वीकार करना या उस आधार पर पीडब्लू-1 की उपस्थिति पर संदेह करना संभव नहीं है।

मृतक राम सिंह का पोस्टमार्टम डॉ. आर.एस. कटियार (पीडब्लू-5) द्वारा किया गया। पोस्टमार्टम रिपोर्ट प्रदर्श क-4 है। चिकित्सा अधिकारी ने मृतक के शरीर पर निम्नलिखित मृत्युपूर्व चोटें पाईः-

1. बंदूक की गोली का घाव (प्रवेश का घाव) 3 सेमी × 1 सेमी। चेहरे के बायीं ओर निचले होंठ के बायीं ओर के ठीक ऊपर विस्तार का घाव।

3 सेमी × 2 सेमी, दाहिनी पार्श्विका हड्डी के ऊपर, 7 सेमी. दाहिने कान के ऊपर

2. बंदूक की गोली का घाव 2.5 सेमी × 1 सेमी। चेहरे के दाहिनी ओर अधिकतम से नीचे प्राधान्य

3. 13 सेमी × 11 सेमी के क्षेत्र में कई बंदूक की गोली के घाव। पीठ के दाहिनी ओर स्कैपुला के निचले कोण के नीचे।

4. बंदूक की गोली का घाव (प्रवेश का घाव) 2 सेमी × 2 सेमी पीठ के दाहिनें हिस्से पर 2 सेमी। 12 वीं वक्षीय कशेरुका का दाहिना भाग।

5. 9 सेमी × 4 सेमी के क्षेत्र में एकाधिक बंदूक की गोली के घाव। पीठ के ऊपर और दाहिनी बांह के मध्य में।

अपनी साक्ष्य पर भरोसा करते हुए अपीलकर्ता के विद्वान वकील ने तर्क दिया कि पीडब्लू-1, 2 और 3 द्वारा दिया गया मौखिक विवरण रिकॉर्ड पर उपलब्ध चिकित्सा साक्ष्य से भिन्न है। यह तर्क दिया गया है कि चश्मदीदों के अनुसार सभी चार गोलियाँ बंदूक से पीड़ित के दाहिनी ओर से चलाई गई थीं, घाव संख्या 1 (प्रवेश का घाव) चेहरे के बाईं ओर था और गोली लगने से हुआ था। यह साक्ष्य प्रत्यक्षदर्शियों के इस दावे को झुठलाता है कि उन्होंने राम सिंह पर हमला होते देखा था। यह सच है कि जिरह में चोट संख्या 1 की प्रकृति के संबंध में पूछे गए सवाल पर चिकित्सा पदाधिकारी ने बताया कि उक्त चोट केवल गोली से लगी है। विद्वान वकील ने तर्क दिया कि पीडब्लू-1 के अनुसार भी अभियुक्तों के हाथ में हथियार 12 बोर की बंदूकें थीं, न कि कोई पिस्तौल या रिवॉल्वर और हमलावरों के हाथ में जिन आग्नेयास्त्रों का आरोप लगाया गया था, उनसे कोई गोली नहीं लग सकती थी। इस दलील में कोई दम नहीं है, चिकित्सा अधिकारी बैलिस्टिक विशेषज्ञ नहीं है। उससे इस बात का जवाब देने की उम्मीद नहीं की जा सकती थी कि क्या चोट संख्या 1 अकेले गोली से कारित की जा सकती थी और उस सीमा तक उनकी राय का कोई महत्व नहीं है। यह अच्छी तरह से स्थापित है कि चिकित्सा साक्ष्य केवल राय का सबूत है और यह निर्णायक नहीं है और जब मौखिक साक्ष्य चिकित्सा राय के साथ असंगत

पाया जाता है, तो एक या दूसरे पर भरोसा करने का सवाल प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करेगा। इसके लिए कोई कठोर नियम नहीं बनाया जा सकता। यदि अन्यथा स्वीकार्य है तो चक्षुदर्शी साक्ष्य को चिकित्सा से अधिक महत्व दिया जाना चाहिए। हालांकि जहां चिकित्सा साक्ष्य चक्षुदर्शी संबंधी संस्करण को पूरी तरह से असंभावित करता हैए उसे अभियोजन संस्करण की विश्वसनीयता को प्रभावित करने वाले कारक के रूप में लिया जा सकता है। हम चिकित्सा अधिकारी की इस राय पर भरोसा करने के इच्छुक नहीं हैं कि चोट संख्या. 1 केवल गोली से ही घायल किया जा सकता था चिकित्सा अधिकारी की साक्ष्य के इस भाग को किसी विशेषज्ञ की राय नहीं माना जा सकता है क्योंकि वह बैलिस्टिक विशेषज्ञ नहीं है। और ना ही इसका कोई साक्ष्यात्मक मूल्य है। चिकित्सकीय साक्ष्य के आधार पर पीडब्लू-1, 2 और 3 के साक्ष्यों और घटना स्थल पर उनकी उपस्थिति पर अविश्वास करना संभव नहीं है। उच्च न्यायालय ने ठीक ही कहा कि चोट संख्या 1 और क्या वह गोली या गोली से लगी थी, के संबंध में विवाद बिना किसी आधार के है।

राज्य के विद्वान वकील ने सही तर्क दिया कि सामान्य उद्देश्य को आगे बढ़ाने के लिए पीड़ित पर गैरकानूनी सभा के सदस्यों द्वारा हमले के मामले में, अभियोजन पक्ष के लिए प्रत्येक आरोपी द्वारा किए गए प्रत्यक्ष कृत्य को स्थापित करना आवश्यक नहीं है। इस बात पर ध्यान देने की आवश्यकता है कि राम समुझ (ए-1) जिसने दो गोलियाँ चलाई थीं, उसे

सत्र न्यायालय द्वारा दोषी ठहराया गया था, उसने अपनी दोषसिद्धि को उच्च न्यायालय में चुनौती भी नहीं दी। अपीलकर्ताओं को आईपीसी की धारा 149 की सहायता से पढ़ी गई धारा 302 के तहत सही तरीके से दोषी ठहराया गया है। पीडब्लू-5 ने अपनी साक्ष्य में कहा कि मृतक को लगी सभी चोटें बंदूक से लगी थीं। आगे कहा गया है कि "मृतक के शरीर से एक गोली, एक कवर "टिकली" दो डाट और 40 छर्रे शॉट निकालकर पैकेट में डाल दिए गए और सील कर दिया गया..." उसकी साक्ष्य में यह भी कहा गया है कि मृतक के शरीर पर आई चोटें सामान्य रूप से मृत्यु का कारण बनने के लिए पर्याप्त थीं। चिकित्सीय साक्ष्य के इस भाग को यदि पीडब्लू-1, 2 और 3 की मौखिक साक्ष्य के साथ मिलाया जाए तो इस प्रश्न पर विचार करना अनावश्यक हो जाता है कि किस अभियुक्त ने कौन सी चोट पहुंचाई और कौन सा घातक था। एक बार जब किसी गैरकानूनी जमावड़े की सदस्यता स्थापित हो जाती है, तो आईपीसी की धारा 149 की सहायता से दायित्व तय करने के लिए किसी भी आरोपी पर कोई विशिष्ट प्रत्यक्ष कृत्य स्थापित करना अभियोजन पक्ष के लिए बाध्य नहीं है। विधि विरूद्ध जमाव के प्रत्येक सदस्य द्वारा ओवर एक्ट कार्य करना आवश्यक नहीं है। वर्तमान मामले में अभियुक्तों की गैरकानूनी सभा का सामान्य उद्देश्य इस तथ्य से स्पष्ट है कि उनमें से कुछ घातक हथियारों से लैस थे। उनमें से कोई भी 19.2.1977 को अपराह्न 3.30 बजे खेले गए भयानक नाटक का जिज्ञासु दर्शक या दर्शक नहीं था। गलियारा, गांव बादीपुर।

उपरोक्त कारणों से, हम इस अपील में कोई योग्यता नहीं पाते हैं। तदनुसार अपील खारिज की जाती है।

बी.बी.बी. अपील खारिज

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी मनमोहन चंदेल आर.जे.एस. (जिला न्यायाधीश संवर्ग) द्वारा

किया गया है।

अस्वीकरणः

यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिये स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।